कोस्का की राह पर

–रजनीश

देशभर के जंगल क्षेत्रों में स्वःशासन और वर्चस्व के सवाल पर वनसमुदायों और वनविभाग में छिड़ी हुयी जंग के बीच उड़ीसा के जंगल में एक ऐसा गॉव भी है, जिसने अपने हजारों हेक्टेअर जंगल को आबाद करके न सिर्फ अपने पर्यावरण और आजीविका को नयी जिन्दगी दी है, बल्कि वनविभाग और तकनीकी वन वैज्ञानिकों को चुनौती देकर सरकारों को एक नज़ीर बख्शने का भी काम किया है।

उड़ीसा की राजधानी भुवनेश्वर से मात्र 80 किलोमीटर की दूरी पर जनपद नयागढ़ में बसा यह गॉव कोस्का अपने जंगल का खुद मालिक है। इस गॉव के लोगों ने अपने उजड़े हुये जंगल को खुद आबाद किया है, वे खुद इसकी सुरक्षा करते हैं और तय की गयी व्यवस्था के तहत खुद ही जंगल से प्राप्त होने वाली लघुवनोपज का बटवारा भी करते हैं।

ग्रामवासियों के अनुसार सन् 1970 के दशक तक आते–आते वनविभाग और लालची तत्वों ने यहां के जंगल को काट–काट कर पूरा बरबाद कर दिया था। कभी बैम्बू, साखू और बरगद आदि कई तरह के प्राकृतिक पेड़ों से हरा–भरा और महुआ की खुश्बू से महकता हुआ यहां का जंगल मात्र कटे हुये पेड़ों की जड़ो का कब्रिस्तान बन कर रह गया था। जंगल का सर्वनाश हो जाने के कारण यहां का भूजल स्तर काफी नीचे चला गया और मौसमी परिवर्तन भी अपना रंग दिखाने लगे। यहां पीढ़ियों से बसे कंध आदिवासी, दलित समुदाय और अन्य पिछड़े वर्गों के लोगों का बिना जंगल और पानी के जीना मुहाल हो गया था। यह सब स्थिति देखते हुये यहां के मुखिया विश्वनाथ ने तब 18 वर्ष की छोटी उम्र में पहल करते हुये ग्रामवासियों के साथ मिलकर तय किया कि वे अपना जंगल खुद आबाद करेंगे और इसकी सुरक्षा भी करेंगे। सन् 1970 में उन्होंने यह क्रान्तिकारी शुरुआत करते हुये यहां के गांव कोस्का व हाथी मुण्डा जंगल सुरक्षा समिति का गठन किया। यह शुरुआत भले ही कोस्का से की गयी लेकिन यहां के लोगों ने अपनी सामुदायिक शैली से जीवन जीने की मूल प्रवृति का परिचय देते हुये शुरुआत के समय से ही आस–पास बसे दूसरे गॉवों के लोगों को भी अपने साथ शामिल किया। जंगल लगाने और इसकी सुरक्षा करने के लिये इन्होंने एक व्यवस्था कायम की जिसे इन्होंने ठेंगापाली नाम दिया। ठेंगापाली एक ऐसी सर्पाकार मुड़ी तुड़ी लाठी है जो कि आज इनमें जंगल की सुरक्षा का प्रतीक बन चुकी है। जंगल की सुरक्षा की जिम्मेदारी के लिये बारी–बारी से रोज़ाना ठेंगापाली को किसी एक घर की दहलीज पर रख दिया जाता जिसका अर्थ होता कि आज जंगल में पहरा देने की जिम्मेदारी उस परिवार की है। यह पहरा शुरुआत में दिन और रात दोनों समय दिया जाता था, जो कि अब केवल रात में ही दिया जाता है। सन् 1970 में करीब एक हजार हेक्टेअर वनक्षेत्र में यह शुरुआत की गयी। उस वक्त गांव के 51 परिवारों के 51 सदस्यों की बनायी गयी समिति द्वारा दी गयी व्यवस्था रंग लाने लगी और कुछ ही सालों में देखते ही देखते यहां का जंगल फिर से आबाद होने लगा। जंगल आबाद होने पर समिति द्वारा तय किये गये कायदे के अनुसार वर्ष में तीन बार ज़रूरत के

हिसाब से तय की गयी मात्रा में गॉव के सभी परिवारों को बैम्बू, हल बनाने और जलावन के लिये लकड़ी तथा महुआ जैसी लघुवनोपज उपलब्ध करायी जाती। हल बनाने के लिये लकड़ी उसी को दी जाती जिसे ज़रूरत होती अन्यथा नहीं, क्योंकि यहां के लोग नाहक पेड़ काटने से हमेशा बचना चाहते थे।

हालांकि शुरुआत के समय में इस ठेंगापाली व्यवस्था से आस–पास के 16 अन्य गॉव भी जुड़ गये और करीब 16000 हेक्टेअर जंगलक्षेत्र में यह काम शुरु किया गया, लेकिन वे ज़्यादा समय तक इस व्यवस्था को कायम नहीं रख पाये। आज कोस्का व हाथीमुण्डा जैसे इक्का दुक्का गॉव ही हैं जो जंगल पर स्वःशासन स्थापित करने वाली इस ठेंगापाली व्यवस्था को न सिर्फ अपने लिये बादस्तूर जारी रखे हुये हैं, बल्कि आस–पास के दूसरे गॉवों में बसे परिवारों की ज़रूरतों को भी अपने आबाद किये जंगल से पूरा करने का काम करते हैं। जिसकी एवज में उनसे बाकायदा एक निर्धारित किया गया शुल्क लिया जाता है, जो कि जंगल सुरक्षा समिति के कोष में जमा हो जाता है। दूसरे गॉव के लोगों को जंगल में पेड़ अथवा लघुवनोपज काटने के काम आने वाला कोई औजार ले जाने की अनुमति भी ठेंगापाली व्यवस्था का कानून नहीं देता। लोगों की मांग व जमा किये गये शुल्क के आधार पर समिति स्वयं उनकी मांग को पूरा करती है। समिति के को–आर्डिनेटर कैलाश चन्द्र साहू बताते हैं कि पास के गांवों से यहां पैदा होने वाले महुआ के फूलों की ज़्यादा मांग आती है, जिससे वे भोजन में प्रयुक्त होने वाला तेल निकालते हैं। समिति द्वारा बनाये गये कायदों में कायदा तोड़ने पर दंड का भी प्रावधान रखा गया है। जिसमें नगद रुपया से लेकर गॉव निकाला तक शामिल है। दंड के नाम पर किसी भी तरह का शारीरिक उत्पीड़न नहीं किया जाता। नगद जुर्माना भी जंगल के किये गये नुक्सान के आधार पर तय किया जाता है। इस सामूदायिक व्यवस्था में अगर किसी परिवार को कभी अतिरिक्त आवश्यकता होती है, तो दी गयी उस अतिरिक्त लघुवनोपज का भी शुल्क लिया जाता है। लघुवनोपज की एवज में और दंड द्वारा समिति में जमा किया गया कोष वर्ष के अन्त में गॉव के सभी परिवारों में बराबर–बराबर बांट दिया जाता है। यहां पूर्व में बसे 51 परिवारों जो कि अब बढ़ते–बढ़ते करीब 80 की संख्या में हो गये हैं में भले ही देसुआ कंध और मालवा कंध जनजातियां और अन्य जातियों के दलित एवं पिछड़े वर्गों से सभी तरह के लोग निवास करते हों, लेकिन उन्हें गॉव में और समिति में कभी भी जातियों के आधार पर बांटकर अलग–अलग नहीं देखा जाता। ठेंगापाली व्यवस्था सभी के लिये एक जैसी ही रखी गयी है।

1 जनवरी 2008 को वनाधिकार कानून देशभर में लागू होने के बाद जब उड़ीसा सरकार ने भी राज्य में कानून लागू कराने संबन्धी आदेश जारी किये तो कोस्का में भी वनाधिकार कानून के क्रियान्वयन की प्रक्रिया समिति द्वारा पहल करते हुये शुरू की गयी। जाहिर है यहां भी इस कानून के क्रियान्वयन की प्रक्रिया का हश्र वही हुआ जो कि वनविभाग और सामंती सोच से ग्रस्त नौकरशाही द्वारा पूरे देश में किया जा रहा है। लेकिन कोस्का के लोगों ने सरकारी तरीके से इस कानून को लागू करने की प्रक्रिया को एक प्रकार से ठेंगा ही दिखा दिया है और विश्वनाथ का कहना है कि हमने तो अपने गांव में सरकार के कानून लागू करने से पहले ही कानून को लागू कर लिया

है। अब जंगल हमारे नियंत्रण में है और अब जंगल पर कैसे हमारा मालिकाना हक़ हमें मिलेगा ये हमारी ग्राम सभा ही तय करेगी। यहां के लोगों को कहना है कि अफसरशाही किसी भी तरह से इस कानून को हमारे पक्ष में लागू नहीं करेगी, क्योंकि वे नहीं चाहते कि वनसम्पदा समुदायों के हाथ में जाये। इस लिये जब यहां कानून के क्रियान्वयन की प्रक्रिया शुरू की गयी तो देश के दूसरे हिस्सों की तरह यहां भी स्थानीय वनविभाग और प्रशासन इन्हें 75 वर्ष के निवास प्रमाण की अनिवार्यता के मकड़जाल में फंसा कर इनके कानूनी अधिकार की प्राप्ति के रास्ते में तमाम तरह के रोड़े अटकाने लगा । 18 मार्च 2009 को कोस्का सहित करीब 20 गांवों के लोगों ने अपने दावे उपखण्ड स्तरीय समिति के समक्ष प्रस्तुत कर दिये थे। जिन्हें उपखण्ड स्तरीय समिति ने पास कर दिया, लेकिन इसमें डी0एफ0ओ ने यह आपत्ति लगाकर कर दावों को निरस्त कर दिया कि दावा की गयी जंगल की ज़मीनें पहाड़ किस्म की ज़मीनें हैं और ये वनभूमि में नहीं आतीं। जबकि लोगों का कहना है कि यह तमाम ज़मीनें वनविभाग के खातों में राजस्व वन के रूप में अंकित हैं। प्रमाण प्रस्तुत करने पर इन गांवों के दावे पुनः सन् 2009 में ही उपखण्ड स्तरीय समिति के पास जमा कराये, जो कि करीब दो वर्ष का समय बीत जाने के बाद भी अभी तक जिला स्तरीय समिति के पास लम्बित पड़े हुये हैं।

यह बात तो बिल्कुल साफ है कि इस गांव में कानून को कैसे लागू किया जाना है, इसके लिये सरकार को ही इस गांव से प्रशिक्षण लेना चाहिये। क्योंकि कोस्का इस मामले में नज़ीर साबित हुआ है और एक संदेश दे रहा है कि अगर वनाधिकार कानून को वास्तविक रूप में लागू कराना है तो पहल समुदायों को ही करनी होगी और वो भी बिना किसी याचना के अधिकारों को स्थापित करके। दूसरी ओर यह गांव एक और तरह की नज़ीर का भी चश्मदीद है, जो कि वनाधिकार कानून की मूल मंशा वनसमुदायों के साथ हुये ऐतिहासिक अन्यायों से मुक्ति की धज्जियां उड़ा कर वनविभाग द्वारा एक ऐसे गांव के अधिकारों को मान्यता न देकर प्रस्तुत की जा रही है, जिसे न सिर्फ राज्य सरकार पुरस्कृत कर चुकी है, बल्कि जिस गांव की ठेंगापाली वनरक्षा पद्धति को फारेस्टरी की शिक्षा प्राप्त करने वाले विद्यार्थियों को उनकी पाठ्य पुस्तकों में पढ़ाया जा रहा है और विदेशों में भी जिस प्रणाली को एक सीख के रूप में लेते हुये अपनाया गया है।

बहरहाल पूरे देश के वनक्षेत्रों में वनाधिकार कानून के क्रियान्वयन की प्रक्रिया पर अगर निगाह डालें तो जो सूचनायें मिल रहीं हैं उनके आधार यह कानून भी वहीं पर लागू हो पा रहा है जहां समुदाय के लोग पहल कर रहे हैं। वरना सरकारी तन्त्र तो मात्र खानापूरी करने के काम में ही लगा हुआ है। यह सच्चाई भी खुल कर सामने आ रही है कि जहां लोग संगठित हैं और अपने अधिकारों को लेकर सचेत हैं उन्होंने वनाधिकार कानून आने से पहले ही अपने अधिकारों को हासिल करना शुरू कर दिया था। उ0प्र0 के जनपद सोनभद्र में यहां के वनसमुदायों द्वारा महिलाओं की अगुआई में अपनी छिनी हुयी करीब 20000 एकड़ ज़मीनों पर कानून आने से पहले ही पुनर्दखल कायम करना, जिन्हें प्रदेश सरकार अब वनाधिकार कानून के तहत नियमित करने जा रही है को भी एक ऐसी ही मिसाल के रूप में देखा जा सकता है। अगर केन्द्र व

राज्य सरकारें वास्तव में वन समुदायों के साथ हुये ऐतिहासिक अन्यायों के प्रायश्चित के रूप में वनाधिकार कानून को देशभर के जंगलक्षेत्रों में लागू करना चाहती हैं तो उन्हें उड़ीसा के इस छोटे से गॉव से बड़ी सीख तो लेना ही होगा। क्योंकि इस गांव के सीधे–सादे लेकिन पूरी व्यवस्था को चुनौती देने वाले वनसमुदाय ने जैसे अपनी ठेंगापाली पद्धति से सरकारों को ठेंगा दिखाने का काम किया है, जो कि इसी राज्य उड़ीसा में पास्को और वेदान्ता बनाम आदिवासी समुदाय के सवाल पर नित नये फैसले करके लगातार अपने दोगले रुख को उजागर कर रही हैं।

—सी0एस0इ0 मीडिया फैलोशिप के तहत

–रजनीश
दिल्ली फोरम
एफ 12/10 ग्राउंड फ्लोर
मालवीय नगर
नई दिल्ली
दूरभाषः–09410471522, 08009892236, 09013128937
email- rajnishorg@gmail.com